सिखाने के लिए बच्चों को समझना ज़रूरी

दीपिका डोबले

मेरी प्राथमिक शाला ग्रामीण क्षेत्र में स्थित है। मैं कक्षा 4 और 5 के बच्चों के साथ काम कर रही हूँ। जब बच्चों के साथ काम शुरू किया तो महसूस किया कि बच्चे बातचीत में अपने अनुभव बेहतर तरीक़े से नहीं रख पा रहे हैं न ही उनकी रुचि पढ़ने और रोज़ विद्यालय आने में है। मैंने बच्चों की उपस्थिति बेहतर करने, उन्हें बोलने और अपनी बात कहने-सुनने के अधिक मौक़े देने के लिए अपने विद्यालय में कुछ नए प्रयास शुरू किए हैं। यहाँ मैं अपने काम के ऐसे दो अनुभव रख रही हूँ।

मैंने बच्चों की मदद से कार्डशीट पर Hug, Hi-Fi, Shake hand और नमस्ते जैसे 'वेलकम वर्ड' लिखकर कक्षा के दरवाज़े के पास चिपकाए। प्रार्थना सभा के बाद जब बच्चे कक्षा में प्रवेश करते हैं, मैं ख़ुद उनका स्वागत करती हूँ। बच्चे Hug, Hi-Fi, Shake hand और नमस्ते, इन चार में से किसी एक शब्द पर उँगली रखते हैं या बोलते हैं। इस तरह से उनका स्वागत किया जाता है। इस गतिविधि से बच्चों और मेरे बीच तालमेल बढ़ा है, बच्चे आपस में घुलने-मिलने लगे हैं, और अपने मन की बात साझा करते हैं। हमने माचिस के कुछ ख़ाली बॉक्स इकट्ठे किए और उसके बाहरी आवरण पर सफ़ेद काग़ज़ चिपकाया। इसके बाद सभी बच्चों से उनकी पासपोर्ट साइज़ फ़ोटो मँगवाई गईं और वे माचिस की डिब्बी की ऊपरी सतह पर चिपका दी गईं। माचिस के भीतरी हिस्से, जिसमें तीलियाँ रखी जाती हैं, की पीछे की सतह पर सफ़ेद काग़ज़ चिपकाकर एक किनारे पर A और दूसरे पर P लिख दिया गया। यह कार्य बच्चों के साथ मिलकर किया। अब जो बच्चे उपस्थित होते हैं, वे अपने माचिस बॉक्स से ख़ुद उपस्थिति प्रदर्शित कर देते हैं। उपस्थिति लगाने का यह तरीक़ा रचनात्मक होता है। इसी तरह से, जो बच्चे अनुपस्थित होते हैं उनकी अनुपस्थिति मैं कर देती हूँ। इससे हुआ यह कि बच्चों में रोज़ विद्यालय आने तथा अपनी उपस्थिति लगाने की आदत बनी, और उन सबकी उपस्थिति नियमित होने लगी।

बच्चों को अभिव्यक्ति के अवसर देने के लिए कक्षा को भाषा-समृद्ध बनाना बहुत ज़रूरी हो गया था। कक्षा में सभी बच्चों के नाम का चार्ट बनाकर लगाया और कविता व कहानियों के चित्र पोस्टर बनाकर लगाए। शब्द-चित्र, संख्या-चित्र कार्ड, आदि बनाए गए। कक्षा में दो सीखने के कोने भी बनाए। पहला, किताबों का कोना और दूसरा, बच्चों के काम को प्रदर्शित करने का कोना। इन सबको बनाने में भी बच्चों की भागीदारी रही। अब बच्चे इन सामग्रियों को पढ़ने व सीखने की प्रक्रिया में इस्तेमाल करते हैं। उनके सहयोग से कुछ सामग्रियाँ समय-समय पर बदली भी जाती हैं। बच्चों के साथ स्थानीय परिवेश के मुद्दों, जैसे गाँव में घटी किसी घटना के अनुभव, तीज-त्योहार मनाने के अनुभव, कहीं घूमने या यात्रा के अनुभवों पर बात करना, या किसी बच्चे का जन्मदिन मनाना, आदि गतिविधियाँ बच्चों के साथ मिलकर नियमित रूप से करनी शुरू कीं। बच्चों को रोज़ कविता-कहानियाँ सुनाना व सुनना और उन पर चर्चा करना शुरू किया। अब सभी बच्चे ख़ूब बातचीत करते हैं, और अपने अनुभव साझा करते हैं।

एक बार मैं बच्चों को 'पत्र लेखन' समझा रही थी। इस दौरान मैंने बच्चों के साथ संचार माध्यम के तरीक़ों और उनकी उपयोगिता पर बातचीत की। सभी बच्चों ने इस चर्चा में भाग लिया और सन्देश पहुँचाने के तरीक़ों, जैसे पत्र, ईमेल, व्हाट्सऐप, फ़ोन कॉल, आदि पर अपने अनुभव रखे। बच्चों ने बताया कि जब रिश्तेदार, परिचित लोग या दोस्त घर से दूर होते हैं तो उनसे बातचीत करने के लिए संचार माध्यम की ज़रूरत होती है। बच्चों को अभिव्यक्ति के अवसर देने के लिए उन्हें लिखित व चित्रात्मक अभिव्यक्ति के लिए प्रोत्साहित किया गया। बच्चों के लेखन में ग़लतियाँ नहीं ढूँढ़ीं, बल्कि उनकी लिखी हुई सामग्री और चित्रों को चार्ट पेपर लगाकर दीवार पर प्रदर्शित किया। इससे सभी बच्चे एक दूसरे का लिखा हुआ पढ़ सके, और एक दूसरे के लिखे में हुई ग़लती को पहचानकर ख़ुद से सही भी कर सके। अब सभी बच्चे बेझिझक होकर अपनी बातें, अपने विचार लिखते हैं। अब तक बच्चों के साथ किए गए काम से मैंने यह महसूस किया है कि मुझे कक्षा के हर बच्चे को समझना होगा, और उनके सीखने की ज़रूरत एवं तरीक़ों के बारे में जानना होगा। बच्चे अब मुझसे व आपस में एक दूसरे से घुल-मिल गए हैं। वे ख़ाली समय में कक्षा के लर्निंग कॉर्नर में मौजूद किताबों, सामग्री-पोस्टर, आदि को ख़ुद से पढ़ते रहते हैं, और उन पर चर्चा करते हैं। अब सभी बच्चे नियमित तौर पर विद्यालय आ रहे हैं, और उनमें बोलने व अपनी बात कहने का आत्मविश्वास आया है।

दीपिका डोबले, शिक्षिका, प्राथमिक शाला संदई, रहली, ज़िला सागर, मध्य प्रदेश

माँ, मैं पढ़ना चाहती हूँ, मुझे स्कूल भेजो!

रिंकू सिंह

यह बात उन दिनों की है जब मेरी नियुक्ति उत्तर प्रदेश के बुलंदशहर ज़िले के उच्च प्राथमिक विद्यालय, नगला सारंगपुर में अध्यापक के पद पर हुई। मैंने बच्चों के साथ शुरुआत बातचीत करके उनसे दोस्ती करने से की और बातचीत के दौरान कक्षा 8 के बच्चों से पूछा, "आप बड़े होकर क्या बनना चाहते हैं?" एक बच्ची को छोड़कर कुछ बच्चे डॉक्टर या इंजीनियर बनना चाहते थे, कुछ फ़ौज में जाना चाहते थे। लेकिन एक बच्ची गुमसुम बैठी थी। उसका नाम रज़िया था। मैंने दुबारा प्रश्न किया, तब उसने कहा, "मैं कुछ भी बनना नहीं चाहती।" मुझे आश्चर्य हुआ। कारण जानने पर उसने बताया, "मेरे पिता नहीं चाहते मैं आगे पढ़ाई करूँ।" मैंने रज़िया को सान्त्वना दी, "मैं तुम्हारे पिता से बात करूँगा, तुम अच्छे से पढ़ाई करो।" फिर साथी अध्यापकों और ग्रामवासियों से रज़िया के पिता के बारे में पता किया। सबने मिलकर पिता से चर्चा की। उनकी सोच का निष्कर्ष निकाला कि वह नहीं चाहते कि अब उनकी बच्ची आगे पढ़े। वह जितना पढ़ चुकी है, उतना पर्याप्त है।

मैं समझ गया कि पिता को अलग तरीक़े से समझाना पड़ेगा। इसके लिए कक्षा में सामूहिक रूप से छोटी-छोटी गतिविधियाँ आयोजित करनी शुरू कीं। मैंने पाया कि रज़िया कक्षा की होशियार छात्राओं में से एक है। यह भी जानता था कि इन गतिविधियों में वह बहुत अच्छा करेगी। हमने गाँव के लोगों से अनुरोध किया कि वे इस बच्ची की शिक्षा जारी रखने के लिए सहयोग करें। गतिविधियों में रज़िया का प्रदर्शन अच्छा रहने पर अन्य अभिभावकों के साथ उनके पिता को बुलाकर सम्मानित करेंगे। योजना बनाकर विद्यालय में विज्ञान, गणित, चित्रकला, खेल एवं सामान्य ज्ञान की सामूहिक गतिविधियाँ कराईं। रज़िया का प्रदर्शन सभी गतिविधियों में कमाल का रहा। योजना मुताबिक़, विद्यालय में बच्ची के पिताजी को सम्मानित किया गया। यह भी कहा, "आपकी बेटी हमारे गाँव की शान है, वह गाँव का नाम रोशन करेगी। आप उसके बहुत अच्छे पिता हैं।" यह सिलसिला रज़िया की कक्षा 8 पूर्ण होने तक चलता रहा।

कक्षा 8 उत्तीर्ण करने पर मैंने रज़िया के पिताजी से उसके कक्षा 9 में प्रवेश के बारे में कहा। उन्होंने कहा, "मास्टरजी, मैंने विद्यालय आकर देखा कि मेरी बेटी पढ़ने में अच्छी है, पर अब मैं बेटी को आगे नहीं पढ़ाना चाहता।" मैंने पूछा, "आप ऐसा क्यों कह रहे हैं?" उन्होंने अपनी वही पुरानी धारणाएँ दोहराईं। फिर नरम लहजे में कहा, "मैं अपनी बेटी को ज़्यादा नहीं पढ़ाना चाहता, पढ़ा-लिखा के मुझे क्या करना है। शादी ही तो करनी है। फिर आगे जाएगी तो समाज बहुत ख़राब है, इसलिए उसे बाहर पढ़ने भी नहीं भेजना चाहता। घर पर रहेगी और घर के काम करेगी।"

मैंने फिर से गाँव के कुछ सामाजिक सरोकार रखने वाले व्यक्तियों से रज़िया के एडमिशन के लिए सहायता माँगी। सभी ने रज़िया के पिता को फिर से समझाया। मैं जानता था कि पिता यह भी कह सकते हैं कि मेरे पास आगे पढ़ाने के लिए पैसे नहीं हैं। हमने इसका भी इन्तज़ाम किया। हम उनके घर गए और हमने अपनी स्नेहिल-सी ज़िद उनसे की। बातचीत के बाद रज़िया की मम्मी ने हमारा सहयोग किया। उन्होंने कहा, "सर, आप सब जाइए। मैं रज़िया के पापा को एडमिशन के लिए राज़ी करती हूँ।" उसकी भी बहुत इच्छा थी आगे पढ़ने की। उसने मम्मी से कहा, "माँ, मैं पढ़ना चाहती हूँ, मुझे स्कूल भेजो!" तब उन्होंने कहा, "मैं अपनी बेटी को आगे पढ़ाऊँगी।" अन्त में रज़िया के पिताजी ने मुझे कहा, "मेरे पास आगे पढ़ाने के लिए पैसे नहीं हैं।" उनका इतना कहना था कि मैंने तुरन्त उनके सामने फ़ीस लायक़ रक़म रख दी। उनको उम्मीद नहीं थी कि ऐसा होगा, और वह चुप हो गए।

अगला दिन बड़ा सुखद रहा। हमें बेसब्री से इन्तज़ार था। रज़िया को लेकर मम्मी विद्यालय आईं। हमने उनको फ़ीस दी, और बच्ची का एडमिशन कक्षा 9 में हो गया। जैसी कि उम्मीद थी, रज़िया ने कक्षा 10 की बोर्ड परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। कक्षा 11 में प्रवेश के समय दुबारा दिक़्क़त आई। उसके पिता ने फिर कहा, "सर, अब तो मैं बेटी को बिल्कुल नहीं पढ़ाऊँगा। वह बड़ी हो गई है। उसके साथ कुछ भी ग़लत घटना हो सकती है।" रज़िया के लिए 11वीं में प्रवेश का संघर्ष ज़्यादा रहा। मैंनें गाँव के लोगों के समर्थन से रज़िया के पिता से फिर बात की और कहा, "आपको रज़िया को पढ़ाना होगा। मैं ज़िम्मेदारी लेता हूँ सारी बातों की।" पिता ने कहा, "बच्ची मेरी है। आप मेरी बच्ची के लिए क्यों इतनी ज़िद कर रहे हैं?" मैंने विनम्रता से कहा, "यह बच्ची आपकी नहीं, देश की

बेटी भी है। एक अध्यापक होने के नाते मैं एक ज़िम्मेदार नागरिक देश को देना चाहता हूँ। एक प्रतिभा जो अपने हुनर के दम पर देश के लिए बहुत योगदान कर सकती है, उसे ज़ाया नहीं होने देना चाहता।" परिणाम बहुत सुखद रहा। अगले दिन रज़िया मम्मी को साथ लेकर विद्यालय आई। रज़िया का कक्षा 11 में एडमिशन हो गया।

रज़िया ने कक्षा 12 की परीक्षा भी प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की, और अब वह स्नातक प्रथम वर्ष में अध्ययनरत है।

मेरे मन को यह सवाल बेचैन करता रहता है कि ऐसी न जाने कितनी रज़िया, सीमा, निशा होंगी जो ऐसे हालात की बेड़ियों को काट नहीं पाती होंगी। जिन्हें इस तरह सहयोग नहीं मिल पाता होगा। मैंने तो एक ही रज़िया की पढ़ाई सुनिश्चित की है। काश, देश की सारी लड़कियाँ, लड़के ख़ूब पढ़ सकें!

टिंकू सिंह, सहायक अध्यापक, उच्च प्राथमिक विद्यालय नगला सारंगपुर, ज़िला बुलंदशहर, उत्तर प्रदेश

पीयर लर्निंग से आया मेरी कक्षा में बदलाव

श्रुति वी

एक दोपहर को मैंने अपने विद्यार्थियों को कुछ पढ़ने का काम दिया। मैंने देखा कि विद्यार्थी टेक्स्ट से जूझ रहे थे। मैं सोच में पड़ गई। हालाँकि कुछ विद्यार्थी आसानी से शब्दों को समझ पा रहे थे, लेकिन कुछ झिझक रहे थे। वे टेक्स्ट की पंक्तियों पर उँगली रख-रखकर, वाक्यों को डिकोड करने की कोशिश कर रहे थे। मैं जानती थी कि यह बुद्धिमत्ता का मामला नहीं था। असल में, यह अवसर, सहयोग और आत्मविश्वास का मामला था। पढ़ने के अवसर और सहयोग मिलने से विद्यार्थियों का आत्मविश्वास बढ़ता है जो उनके पढ़ने को आसान बनाता है।

अतः मैंने विद्यार्थियों के साथ एक बेहद सरल, लेकिन असरकारी, प्रक्रिया 'पीयर लर्निंग' पर काम करने का फ़ैसला किया। लेकिन मुझे पता था कि अगर मैंने यह काम ध्यानपूर्वक नहीं किया तो यह चुनौती आ सकती है कि कुछ विद्यार्थी स्वयं को दूसरों से 'कमतर' महसूस करें, और कुछ ख़ुद को 'श्रेष्ठ' समझने लगें। और मैं नहीं चाहती थी कि ऐसा हो। इसलिए इस काम को करते हुए मैं काफ़ी सचेत थी।

सबसे पहले, मैं अपने L3 विद्यार्थियों के साथ बैठी। ये विद्यार्थी अँग्रेज़ी अच्छे से पढ़-लिख सकते थे, और अकादमिक रूप से मज़बूत थे। उन्हें यह बताने की बजाय, कि वे 'होशियार' हैं, मैंने कुछ इस तरह उनसे बातचीत की, "आपके कुछ सहपाठियों को घर पर आपके जैसा सहयोग नहीं मिलता है। सोचो कि अगर किसी चीज़ को समझने के लिए आपको अकेले ही जूझना है, उसमें आपकी मदद करने वाला कोई नहीं है तो यह कितना कठिन होगा! और कभी-कभी, परिवार ही एकमात्र सपोर्ट नहीं होता जिसकी हमें ज़रूरत होती है, दोस्त और भी बेहतर मेंटर हो सकते हैं। क्या आपको ऐसा नहीं लगता?"

मैंने उनके हाव-भाव बदलते देखे। उन्होंने सिर्फ़ दायित्व से ही सिर नहीं हिलाया, वे समझ गए थे। कुछ ने तो यह भी बताया कि कैसे उन्हें भी एक बार मदद की ज़रूरत पड़ी थी। इस संवाद ने जैसे मुझे आगे बढ़ने के लिए हरी झण्डी दे दी थी।

फिर मैंने अपने L1 विद्यार्थियों से बात की जो अँग्रेज़ी में बात करने में झिझकते थे, और ख़ुद को पीछे महसूस करते थे। मैंने उन्हें सच बताया, "आप सभी एक ही उम्र के हैं। आप सभी की सीखने की क्षमता भी एक जैसी है। बस, आप में से कुछ ने ज़्यादा अभ्यास किया है। आप भी बाक़ी लोगों की तरह ही सुबह उठते हैं, खाते हैं, खेलते हैं, और हँसते हैं। आप अपनी क्षमताओं के कारण पीछे नहीं हैं, आपको बस थोड़ी-सी मदद चाहिए। और हम यह सुनिश्चित करेंगे कि आपको यह मदद मिले।"

मैंने विद्यार्थियों को सुना भी। कुछ विद्यार्थियों ने माना कि उन्हें अकेले पढ़ना पसन्द नहीं है। दूसरों ने कहा कि उन्हें शिक्षकों द्वारा अनदेखा किया जाता है। कुछ ने क़बूल किया कि उनके माता-पिता उनके विद्यालय के काम में उनकी मदद नहीं कर सकते। उनकी ईमानदारी ने इस बात को और पुख़्ता किया कि इस योजना पर काम करने की ज़रूरत क्यों है।

हर सोमवार, सर्कल टाइम के दौरान, हम बातचीत करते थे—न केवल पढ़ाई के बारे में, बल्कि टीम वर्क, पढ़ाई-लिखाई में उनके संघर्ष और प्रगति के बारे में भी। यह एक ऐसा स्थान बन गया जहाँ विद्यार्थी अपने विचार साझा करने में सुरक्षित महसूस करते थे। जब पढ़ने की बात आई तो मैंने L1 और L3 विद्यार्थियों को एक साथ रखा। लेकिन एक बदलाव के साथ—L1 विद्यार्थियों को पहले पढ़ना था, और जो उन्होंने समझा था उसे समझाना था, जबकि L3 विद्यार्थी सुनते थे। फिर L3 विद्यार्थी, L1 विद्यार्थियों को जहाँ-जहाँ समझने में दिक़्क़त होती थी उस रिक्तता को पूरा करने में उनकी मदद करते थे। यह एकतरफ़ा पठन नहीं था, बल्कि एक आदान-प्रदान था। एक दिन, जब एक L1 विद्यार्थी कक्षा में ज़ोर से बोलकर पढ़ रहा था तो वह एक शब्द को लेकर झिझक रहा था, क्योंकि वह

इस शब्द के उच्चारण को लेकर असमंजस में था। इससे पहले कि मैं बीच में बोल पाती, उसके पास ही बैठे एक L3 विद्यार्थी ने उसकी मदद करने के लिए उस शब्द का सही उच्चारण उसे धीरे से बता दिया। L1 विद्यार्थी ने इस बार आत्मविश्वास के साथ इसे दोहराया, और पढ़ना जारी रखा। इस क्षण मुझे एहसास हुआ कि विद्यार्थी अब महज़ निर्देशों का पालन नहीं कर रहे थे, वे स्वाभाविक रूप से एक दूसरे की मदद कर रहे थे।

कुछ ही दिनों में एक अनोखी-सी बात हुई। L1 विद्यार्थियों ने झिझकना बन्द कर दिया। वे ज़्यादा मुखर होने लगे, ज़्यादा पढ़ने लगे, और बिना किसी झिझक के मदद भी माँगने लगे। और L3 विद्यार्थी धैर्यपूर्वक सुनने लगे, तथा अवधारणाओं को छोटी अवधारणाओं में विभाजित कर समझाना सीख गए।

बेशक, यह सब सहज नहीं था। कुछ विद्यार्थियों में श्रेष्ठता या हीनता की भावना विकसित हुई। कुछ L3 विद्यार्थियों ने अन्य विद्यार्थियों पर रौब जमाना शुरू कर दिया, जबकि कुछ L1 विद्यार्थियों ने 'कम सक्षम' महसूस करते हुए ख़ुद को अलग कर लिया।

इसके समाधान के लिए, मैंने इन कम सक्षम विद्यार्थियों को L2 विद्यार्थियों के साथ जोड़ा। ये श्रेष्ठ तो नहीं थे, लेकिन L1 विद्यार्थियों की मदद कर सकते थे, और अन्तर को पाट सकते थे। इस सन्तुलन से बेहतर परिणाम मिले। जिन शरारती विद्यार्थियों ने सहयोग करने से इन्कार किया, उनके लिए मैंने व्यक्तिगत रूप से क़दम उठाया। मैं उनके साथ तब तक काम करती रही जब तक कि वे पूरे समूह में ठीक से शामिल नहीं हो गए। कई सप्ताह बीत गए, अब बदलाव को नकारा नहीं जा सकता था। L1 विद्यार्थी अब बोलने से नहीं डरते थे। L3 विद्यार्थी ज़्यादा सहानुभूतिपूर्ण हो गए। विद्यार्थियों के बीच की दूरी मिटने लगी, और उनमें दोस्ती हो गई।

एक दिन, एक सत्र में मैंने देखा कि एक L1 विद्यार्थी एक शब्द पर झिझक रहा था। इससे पहले कि मैं कुछ कह पाती, उसके L3 पार्टनर ने मुस्कुराते हुए कहा, "कोई बात नहीं, अपना समय लो। मैं भी इससे जूझता था।" तब मुझे पता चला कि अब यह सिर्फ़ पढ़ाई-लिखाई के बारे में ही नहीं था। यह विश्वास, मदद और आत्मविश्वास के बारे में था। पीयर लर्निंग से भाषा कौशल में सुधार से कहीं ज़्यादा हुआ। इसने एक ऐसी कक्षा बनाई जहाँ कोई भी अकेला महसूस नहीं करता।

श्रुति वी, शिक्षिका, अज़ीम प्रेमजी स्कूल, ज़िला कलबुर्गी, कर्नाटक